बच्चों की दुनिया में किताबें

पुस्तकालय : एक परिचय

निशा बुटोलिया

हम सभी पुस्तकालय गए भी हैं और जाते भी रहते हैं। हर किसी का पुस्तकालय जाने का कोई-न-कोई मक़सद होता है। कुछ लोग ख़ासतौर पर अलग-अलग अख़बारों में दिए गए समाचार में रुचि रखते हैं, कुछ कहानियों की किताबों में, कुछ सामान्य ज्ञान में और कुछ की रुचि पत्रिकाओं में होती है। किसी बड़े सार्वजनिक पुस्तकालय में सभी लोगों की रुचियों को समझते हुए संग्रह किया जाता है। पाठशालाओं में विशेषतौर पर 'अच्छे' पुस्तकालय का होना अनिवार्य है। 'अच्छे' से मेरा तात्पर्य है, ऐसा पुस्तकालय जहाँ बच्चों की ज़रूरतों के अनुसार जानी-मानी पुस्तकों का संग्रह हो, और साथ-ही-साथ ऐसी जगह और लोग हों, जो किताबों की इस दुनिया से बच्चों का सहज और रोचक ढंग से परिचय करवाएँ।

कक्षा में भी एक पुस्तकालय हो, यह माँग भी है और ज़रूरत भी। कुछ अच्छी कक्षाओं में 'किताब का कोना' होता है, जहाँ पर बच्चों की उम्र और रुचि के अनुसार पठन सामग्री रखी हुई होती है। और इस सामग्री के इर्द गिर्द क्रियाकलाप भी होते हैं, ताकि बच्चों के जीवन से यह पठन सामग्री सार्थक रूप से जुड़ी रहे। या यूँ कहिए कि बच्चों की दुनिया में किताबें भी सहज रूप से शामिल हो जाएँ।

बच्चों का स्वभाव और किताबें

बच्चों का क़रीब से अवलोकन करने पर यह स्पष्ट होता है कि वे आसपास की चीज़ों में रुचि लेते हैं। उनके मन में हर बात को जानने का कौतुहल होता है। वे यदि मन में ठान लें, पता लगाकर ही रहते हैं, और यही उनका आनन्द प्राप्ति का तरीक़ा भी है। यही बात पुस्तकों पर भी लागू होती है। इर्द गिर्द यदि पुस्तकें हों, बच्चे उनमें भी रुचि लेंगे। यह शुरुआती रुचि बच्चों को किताबों की दुनिया का आस्वाद लेने का एक महत्त्वपूर्ण चरण है।

किताबों का संसार कितना रोचक होता है, यह हम सभी जानते हैं। सफ़दर हाशमी की

कविता 'किताबें' आपने पढ़ी होगी। इस कविता से कुछ अंश :

किताबें
करती हैं बातें
बीते ज़मानों की
दुनिया की, इंसानों की
आज की, कल की
एक एक पल की।
ख़ुशियों की, ग़मों की
फूलों की, बमों की
जीत की, हार की
प्यार की, मार की।
क्या तुम नहीं सुनोगे
इन किताबों की बातें?

(साभार : दुनिया सबकी : सफ़दर हाशमी की कविता, सफ़दर हाशमी)

इसी प्रकार से, महाश्वेता देवी की किताब क्यूँ-क्यूँ लड़की के कुछ अंश :

"बाबू की बकरियाँ मैं क्यूँ चराने ले जाऊँ? उनके लड़के क्यूँ नहीं ले जाते?"

"मछलियाँ बोल क्यूँ नहीं सकतीं?"

"अगर बहुत सारे तारे सूरज से भी बड़े हैं, तो वे इतने छोटे क्यूँ दिखते हैं?"

एक रात उसने मुझसे पूछा, "तुम सोने से पहले किताबें क्यूँ पढ़ती हो?"

"क्यूँकि किताबों में तुम्हारे 'क्यूँ' के उत्तर हैं," मैंने कहा।

और पहली बार मोयना चुप रही।

(*क्यूँ-क्यूँ लड़की*, महाश्वेता देवी)

महाश्वेता देवी की यह कहानी दोनों पक्षों को उजागर करती है। पहला, बच्चे जिज्ञासु होते हैं, और दूसरा, किताबों में बच्चों की जिज्ञासा को बढ़ाने और बल देने का सामर्थ्य है। सफ़दर हाशमी की कविता भी किताबों की दुनिया की सुन्दर झलक प्रस्तुत कर पाठकों को आमंत्रित कर रही है।

अमूमन यह सुनने को मिलता है कि कुछ बच्चे पढ़ने से कतराते हैं, जबकि कुछ अच्छे पाठक होते हैं, और पढ़ने में उन्हें मज़ा आता है। यह फ़र्क़ क्यों? यह फ़र्क़ इसलिए तो नहीं, कि बच्चों का किताबों की दुनिया से परिचय कैसे और कितना हुआ है या इसमें ही अन्तर है?

किताबों का संसार और हमारा संसार

किताबों का एक और पहलू है। जो किताबों को पढ़ता या सुनता है, अपने दिमाग़ में अपने अनुभवों और ज्ञान के आधार पर चित्र बनाता है। हर एक पाठक की समझ और प्रतिक्रिया अलग-अलग हो सकती है। इस अर्थ में किताबें किसी अलमारी या मेज़ पर रखी वस्तु नहीं हो सकतीं। किताबें लेखक और लेखक के संसार की अन्त:क्रिया हैं और साथ ही, इनमें एक पाठक की दृष्टि भी शामिल हो जाती है। इन किताबों की दुनिया में अन्य साथियों के साथ जब मिलजुलकर प्रवेश करते हैं, एक और नई अन्त:क्रिया जन्म लेती है। जैसे ही हम पढ़ने, समझने, बातचीत करने की प्रक्रिया पर ध्यान देते हैं, ऐसा प्रतीत होता है कि इस प्रक्रिया में शामिल होना अपने-आप में एक आनन्दमयी अनुभव है।

कुछ ऐसा ही मेरा अनुभव है। इस लेख में, मैं अपना व्यक्तिगत अनुभव आपके साथ साझा करना चाहती हूँ। मैंने ख़ुद के और अपनी बहनों के बच्चों को जन्म से ही देखा, और उनके साथ समय बिताया है। यह लेख मेरे घर पर किताबों के संसार में आए विस्तार पर आधारित है। मैं हिन्दी भाषी परिवार से हूँ और कुछ हद तक अँग्रेज़ी और मराठी भी जानती हूँ।

किताबों की दुनिया का सफ़र

नवजात शिशु के आने पर और फिर धीरे-धीरे उसके बड़े होने में पालकों और आसपास के सभी लोगों का विशेष योगदान होता है। नन्हे बच्चों के लिए हिन्दी और मराठी में मैंने लोरियाँ गाईं। जैसे– 'धीरे से आजा री अँखियन में निंदिया', 'लल्ला लल्ला लोरी', 'चन्दा मामा दूर के', 'निम्बोनीच्या झाडामागे चंद्र लपला ग बाई' (सखी, नीम के पेड़ के पीछे चाँद छुप गया है), आदि। हिन्दी और ब्रज में भजनों को भी गाया और सुनाया। जैसे– 'कभी राम बनके, कभी श्याम बनके चले आना, प्रभुजी चले आना...' आदि। बच्चों से लगातार बात की, उनके चेहरे के विभिन्न हाव-भाव को अपने तरीक़े से समझा, और उनपर मज़ेदार प्रतिक्रियाएँ भी दीं। माने, बच्चों की दुनिया में रुचि ली, और यह कोई नई बात नहीं है। अमूमन ऐसा ही किया जाता है, और मैंने भी ऐसा ही कुछ किया।

बच्चे आवाज़ों को जल्दी पहचानते हैं और उनको दोहराने की कोशिश भी करते हैं। वेदांत (मेरा बेटा) गाड़ियों के लिए 'भूम-भूम' कहता था। यह एक ओनोमाटोपोइक (onomatopoeic) शब्द है, जिसे हम हिन्दी में 'ध्वनि अनुकरणात्मक' शब्द कहते हैं। बच्चे का रुझान देखते हुए 'भूम-भूम' (बाइक, कार, साइकिल, ऑटो, आदि) खिलौनों के रूप में घर पर, कविता और कहानियों में भी आया : 'बनी भैया मोटर चली पोम्प, पोम्प, पोम्प!', 'Wheels on the bus go round and round', आदि। फिर लगने लगा कि क्यों न पुस्तकें लाई जाएँ, चित्रों से परिचय करवाया जाए, पेंसिल दी जाए। (मेरी अन्दर की शिक्षिका जाग उठी।) बड़ी किताबें जिनमें सुन्दर चित्र, गहरे रंग हों, और चित्रों में सजीवता हो, ऐसी किताबें मैंने खोजीं। हमारे घर हमारे साथी एक कविता *भालू ने खेली फ़ुटबॉल* (राजेश उत्साही) का पोस्टर लाए। उस पोस्टर को वेदांत और घर पर आए रिश्तेदारों के बच्चे भी बहुत ध्यान से देखते थे। हम बच्चों को 'भालू ने खेली फ़ुटबॉल' गाकर सुनाते थे। भालू की कहानी बताते समय भी वही पोस्टर काम आता, और फ़ुटबॉल व चाँद की कहानी में भी। सबसे पहली किताबें जो मैंने ख़रीदीं, वह थीं हिन्दी और अँग्रेज़ी कविताओं की। *Goosy Goosy Gander, Where Shall I Wander* से लेकर *Cock–A–Doodle Doo* और फिर *तोता हूँ मैं तोता हूँ* से लेकर *चिड़िया चूँ-चूँ करती हैं*, आदि। इनमें गीत भी थे। जो कविताएँ बच्चे अब तक सुन रहे

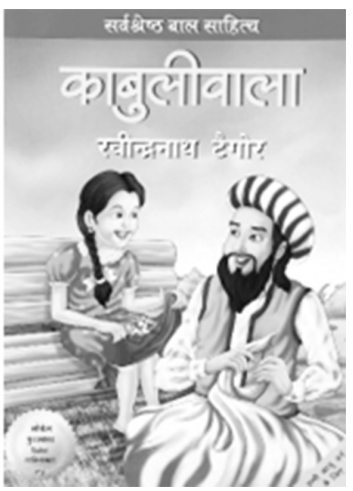

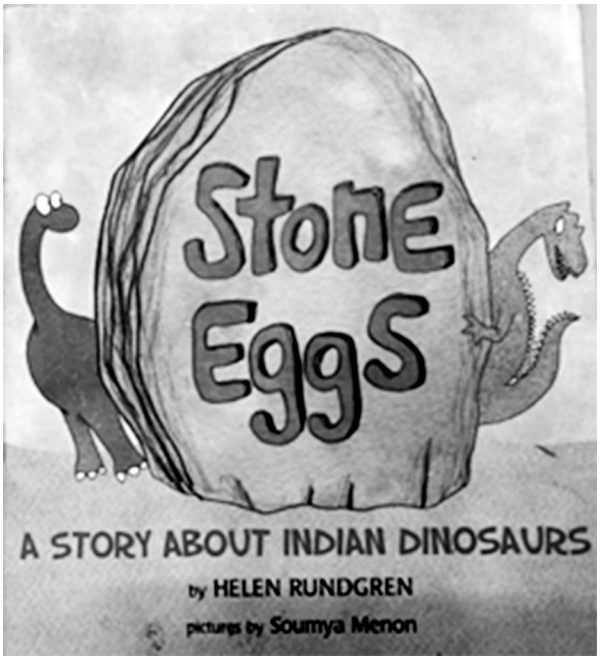

थे, किताबों में उन कविताओं के पात्र चिड़िया, तोता, Goose ढूँढ़ने लगे, उनपर बातें करने लगे। हरिवंशराय बच्चन की *नीली चिड़िया* और *बगुलों की पाँत* धीरे-धीरे घर पर आ गई। *सिंहासन बत्तीसी, पंचतंत्र, जातक कथाएँ,* आदि के साथ बच्चे सहज जुड़ पा रहे थे। हम घर के बड़े इन कविताओं और कहानियों को पढ़कर या गाकर सुनाते। इन कहानियों जैसी और कहानियाँ गढ़ते, और इन पात्रों की चर्चा बातों में भी होती।

जो चीज़ें यहाँ लिखी गई हैं, वह सब पाँच-छह वर्षों में हुई हैं। हाँ, ये एक अलग बात है कि वेदांत ने किसी-न-किसी रूप में कहानी, पुरानी बातें, मज़ेदार क़िस्से अमूमन सुने, और किसी लिखित सामग्री के साथ लगभग रोज़ कुछ-न-कुछ काम किया। कुछ दिन ऐसे भी रहे होंगे, जब इनमें से कुछ भी नहीं हो पाया होगा।

यह सबकुछ पूर्व-नियोजित तो था नहीं। फिर हुआ कैसे? मुझे लगता है, ऐसा इसीलिए सम्भव हो पाया, क्योंकि किताबें जीवन और दिनचर्या का हिस्सा बन गई थीं। नानी और नाना वेदांत को कभी पढ़कर सुनाते या ऐसे ही मन से कोई कहानी बताते। आख़िर रोज़ इतनी कहानी कहाँ से लाएँ! इसलिए हम सब, कुछ ऐसी कहानियाँ बना-बनाकर सुनाते, जो बच्चे जल्दी ही पकड़ लेते हैं। मैंने बच्चों को यह कहते हुए सुना है– ऐसी नहीं सच की कहानी बताओ! और इस तरह से हमारी कल्पनाशीलता को भी चुनौती मिली। एक उदाहरण लेती हूँ :

पिछले कुछ वर्षों से मैंने एक 'बिल्लीपुर' की खोज की है। यहाँ की बिल्लियाँ लगातार कहानियाँ बनाती हैं। यहाँ पर बड़ी-छोटी, मोटी-पतली, ऊँची-औसत ऊँचाई की और छोटी, सारी बिल्लियाँ हैं। उन्हें नहीं पता कि वो मोटी हैं या पतली, बड़ी हैं या छोटी। लेकिन हाँ, एक बिल्ली है। उसकी नज़र सब पर है, और उसे सब पता है! वही सबको कहानी पकाने के लिए सामान देती है। इस बिल्लीपुर की सारी कहानियाँ मीठी होती हैं।

बिल्लीपुर में सारी बिल्लियाँ बहुत व्यस्त हैं, क्योंकि दूर कहीं एक बच्चे ने किसी नई मीठी कहानी का आग्रह किया है। कहानियाँ सारी सच्ची हैं। वो घटती हैं, फिर बिल्लीपुर से निकलकर बच्चों तक आती हैं। कल रात ही एक कहानी बनी है– 'Fresh from the oven'... आओ, मैं सुनाती हूँ। बिल्लीपुर में दीवारें नहीं हैं। दो बिल्लियों ने आपस में कहा, "यहाँ हमारे भाई शेर नहीं आ सकते।" चार बिल्लियाँ जो थोड़ी दूर पर थीं, उन्होंने सुना, "यहाँ हमारे भाई शेर ज़रूर आएँगे।" यह सुनते ही ये चार बिल्लियाँ चकित हो गईं, और दोहराने लगीं, "यहाँ हमारे भाई शेर ज़रूर आएँगे।" आसपास की सारी बिल्लियों ने भी सुना। कुछ ने सुना कि भाई शेर अकेले आएँगे, वहीं कुछ ने सुना कि भाई शेर भूखे आएँगे। कुछ दूर धूप सेंकती बिल्लियों ने सुना कि भाई शमशेर आएँगे।...

इस तरह से हर दिन हम नई बातें बिल्लीपुर में पकाते हैं, और बस कहानियाँ गढ़ते हैं। जब मेरा कहानी बताने का मन नहीं करता, मैं

उसपर भी एक कहानी बना देती हूँ– "जब माँ थकी हो या उनका मन नहीं कर रहा हो, तब बिल्लीपुर में उनको एंट्री नहीं मिलती और वो कहानियाँ नहीं देख पातीं।"

कहानियों में दोहराव हो, विशेष आवाज़ें हों, सस्पेंस हो, बच्चों को भाएँ ऐसे पकवान हों, लोग हों, तब मज़ा आ जाता है। और इस मज़े-मज़े में बच्चे भी कहानी सुनाना और नई कहानी गढ़ना सीख जाते हैं।

एक कहानी है 'ऊँट और सियार' की। वेदांत ने यह कहानी नानी से कई बार सुनी। सुनते-सुनते वह सो गया। अकसर दोपहर को सोने से पहले और रात में वेदांत उसी कहानी को सुनाने की ज़िद करता। ऐसा भी होता है। बच्चों के जीवन में अनेक रंग होते हैं। कभी तो वे एक ही कहानी बार-बार सुनते हैं, और कभी नई-नई कहानियों का आग्रह करते हैं।

और तब एक दिन घर पर कहानी की पुस्तक आई। वेदांत को पढ़ना नहीं आता था, लेकिन पुस्तक देखकर, उसपर उँगली रखकर उसने छपी सामग्री 'ऊँट और सियार' की कहानी समझकर पढ़ ली! (इमर्जेंट लिटरेसी या अंकुरित साक्षरता के परिप्रेक्ष्य से देखें, यह कहा जा सकता है कि बच्चा 'प्रिटेंड रीडिंग' के चरण पर है।)

एक और वाक़या है। एक बार एक शृंखला के तहत टेलीविज़न पर डायनासोर की कहानियाँ आ रही थीं। इसी शृंखला में बताया गया कि डायनासोर लुप्त हो चुके हैं। इस बात से वेदांत बहुत दुखी हुआ। क़रीब चार साल का रहा होगा, बहुत रोया। कुछ दिनों बाद डायनासोर पर एक किताब मैं घर पर लाई। उसमें डायनासोर के जीवन के बारे में कई तथ्य थे। इन तथ्यों को मैंने उसे पढ़कर सुनाया। वेदांत अकसर इस किताब के चित्रों के माध्यम से डायनासोर से जुड़ी ऐसी बहुत सारी बातें बताने की कोशिश करता जो मैंने उसे पढ़कर सुनाई थीं।

बच्चे जो सुनते हैं, देखते हैं, अनुभव करते हैं, इन सभी से जीवन के बारे में एक समझ बनाते हैं। अगर इस उम्र में दिया हुआ साहित्य सटीक हो, तब बच्चे सामाजिक और भावनात्मक तौर से भी बढ़ पाते हैं।

यह भी कि हमारे घर पर किताबें, खिलौने, पेंसिल, मोबाइल, बच्चों की साइकिल, स्नैक्स का डिब्बा साथ-साथ रहने लगे थे। इसीलिए कभी किताबें उलट-पुलट कर देखी जातीं, कुछ देर में खिलौने खेले जाते, और फिर कुछ देर बाद नाना की गोद में बैठकर टेलीविज़न देखा जाता। दिनभर ऐसे ही गुज़र जाता।

स्कूल जाना शुरू हुआ, तब और भी किताबें आईं। लिखने का प्रयास पहले भी हुआ, पर अब अक्षर ज्ञान शुरू हुआ। संयोग से एक पुस्तक मेले में जाने का अवसर मिला। वहाँ एकलव्य, एनबीटी, तूलिका, आदि प्रकाशकों की अनेक किताबें मैंने ख़रीदीं। किताबों का नया भण्डार लेने में मेरे साथियों ने मदद की। अलग-अलग सन्दर्भों और थीम की पुस्तकें हमने चुनीं। उस समय मेरा बेटा चार-पाँच साल का रहा होगा। मैं क़रीब 30 किताबें लाई थी। वेदांत को किताबें

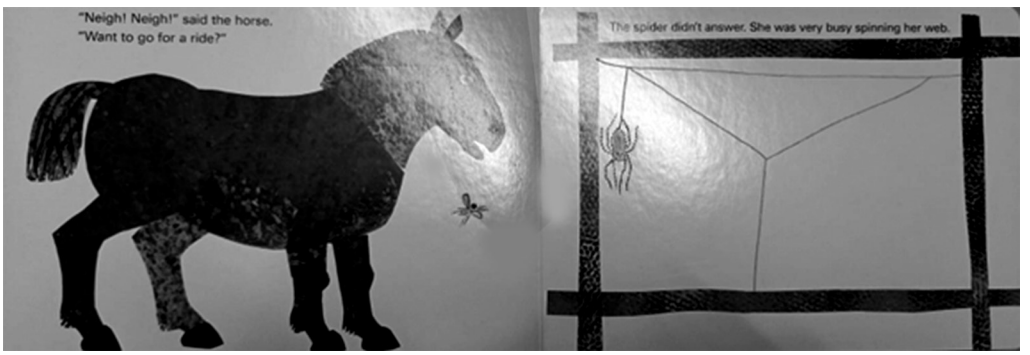

पढ़कर सुनाना मेरा रोज़ का काम था। आए दिन मैं नई-नई किताबें ख़रीद लिया करती थी।

इन सभी कामों का मज़ा तब आया जब एक दिन मैं किसी काम से दूसरे शहर में थी, और वेदांत ने एक कहानी पूरी पढ़कर मुझे फ़ोन पर सुनाई। तब वह 6 साल का था। एरिक कार्ले (Eric Carle) की *The Very Busy Spider.* इस कहानी की विशेषताएँ इस प्रकार से हैं :

1. कहानी में मक्खी, मकड़ी, घोड़ा हैं, जिनके चित्र भी दिए गए हैं। इन जानवरों के नाम वेदांत ने कई बार लिखे हुए देखे थे और ध्वनि-संकेतों का अन्तर्सम्बन्ध उसे पता था।

2. कहानी में दोहराव है। सभी जानवर मकड़ी से अपनी-अपनी आवाज़ में सवाल पूछते हैं, और उन्हें मकड़ी से एक ही तरीक़े का जवाब मिलता है– 'The spider didn't answer. She was very busy spinning her web'.

3. कहानी में बड़ी सीख है, पर बहुत सहज है यह कहानी।

4. मकड़ी जो जाला बुन रही है, पन्ने पलटने के साथ वह धीरे-धीरे बड़ा होता जाता है और बच्चे अपनी उँगलियों से जाले के चित्र को महसूस कर सकते हैं।

यह कहानी बच्चों को आकर्षित करती है। एक पूरी किताब पढ़ने का काम करके वेदांत में ख़ुद के प्रति अनोखा ख़ुशी का भाव जागा था। धीरे-धीरे इसी ख़ुशी और आत्मविश्वास में वेदांत ने कई किताबें पढ़ीं।

वेदांत ने कक्षा 1 तक देवनागरी लिपि लगभग सीख ली थी। वह सरल कहानियों को चित्रों की और हमारी मदद से पढ़ पाता था। जैसे– अट्टू-गट्टू : एक पारम्परिक कथा (चित्र: केजल मिस्त्री, एकलव्य प्रकाशन)। जहाँ तक मुझे याद है, वेदांत को हम तूलिका प्रकाशन की द्विभाषिक किताब Five Little Monkey / पाँच छोटे बन्दर (पुनर्कथन : जीवा रघुनाथ, चित्रांकन : हर्षा नागराजू), पढ़कर सुनाया करते थे। इस कहानी में भी दोहराव है। सिर्फ़ आँकड़े बदलते हैं, बाक़ी पूरा वाक्य ज्यों-का-त्यों ही दुहराया जाता है।

पाँच छोटे बन्दर, बैठकर, पेड़ पर,

ख़ुश थे बहुत, नदी वाले मगरमच्छ को छेड़कर।

चार छोटे बन्दर...

इस किताब को पढ़ने में वेदांत ने उत्साह दिखाया। वह लगभग पूरी किताब पढ़ भी लिया करता था।

घर पर हिन्दी में भी कहानी पढ़कर सुनाने का उपक्रम चलता रहा। जैसे– *अदिति और टेम्स नदी का ड्रैगन* (सुनीति नामजोशी, चित्रांकन :

शेफाली जैन, एकलव्य प्रकाशन), *गली है या चिड़ियाघर* (माला कुमार एवं मनीषा चौधरी, चित्रांकन : प्रिया कुरियन, प्रथम बुक्स), *पायल खो गई* (मुस्कान एवं एकलव्य का संयुक्त प्रकाशन), आदि। आज भी 'पढ़कर सुनाओ' की ज़िद लगातार रहती है। और हम ख़ुशी-ख़ुशी पढ़कर सुनाते हैं। और हाँ, कभी टाल भी देते हैं।

पिछले कुछ वर्षों में वेदांत ने कई किताबें पढ़ ली हैं। इनमें सत्यार्थ नायक की *Mahagatha: 100 Tales From The Puranas,* हैरी पॉटर की सीरीज़ के साथ-साथ रस्किन बांड की कुछ चुनिन्दा किताबें भी शामिल हैं। आजकल वेदांत को पढ़ते हुए देखती हूँ, तो चकित रह जाती हूँ। मुझे यक़ीन ही नहीं होता कि कोई इतनी तेज़ी से मोटी-मोटी किताबें पढ़ रहा है। मैं पढ़ी हुई पुस्तकों में से कुछ सवाल उससे पूछती हूँ। वह कुछ सवालों के जवाब दे देता है। जैसे– कहानी में अब तक क्या हुआ; इसके मुख्य पात्र कौन-कौन हैं; आदि। लेकिन यदि मैं पूछूँ, "उस बच्ची की उम्र क्या थी?" वेदांत ऐसे सवाल के जवाब में सिर्फ़ कहता है, "वो छोटी बहन थी, उम्र याद नहीं है।" फिर वो ये भी कहता है, "यह सब ज़रूरी जानकारी नहीं है।" इस पाठक के विपरीत, मेरी आदत धीरे-धीरे पढ़ने की है, और हर वाक्य पर मेरी नज़र होती है। मुझे बारीक़ी से पढ़ी हुई सभी बातें याद रहती हैं। पर हाँ, मैं कम पढ़ पाती हूँ।

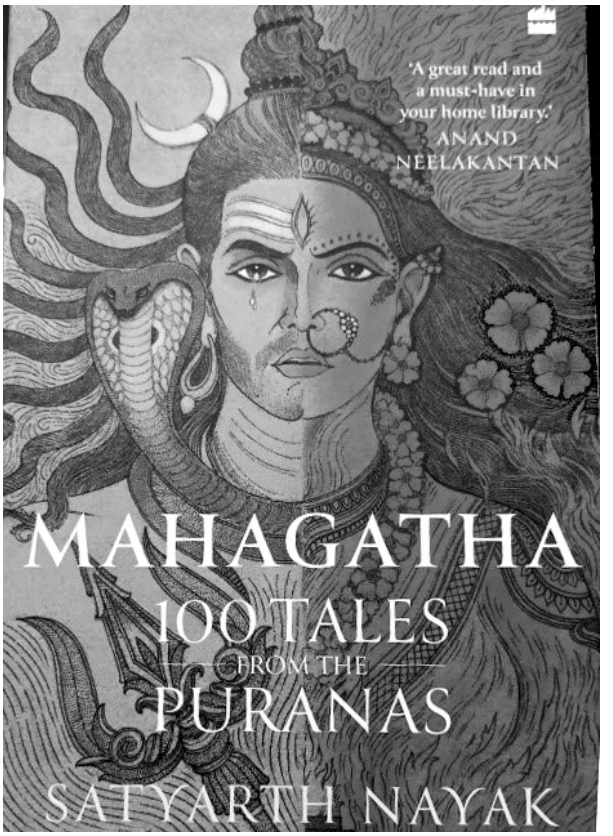

सच कहते हैं, हर पाठक अलग होता है।

अन्त में

समझ के साथ पढ़ना आज के युग में एक मूलभूत क्षमता है, क्योंकि यह हमें दूसरी कई क्षमताओं का विकास करने और नए ज्ञान को उजागर करने में भी मदद करती है। पढ़ना सीखने में लिखना, बोलना और सुनना शामिल है। जो कहानी सुनी, वह पढ़ने की कोशिश की। किताब से किसी को पढ़ते हुए देखा, उस किताब से ख़ुद चित्र बनाकर सभी को बताए। फिर खिलौनों से, दोस्तों से खेले, खेल पर कहानी सुनी, और यह सारे क्रियाकलाप चलते रहे। ये सब काम पूर्व-नियोजित नहीं, बल्कि जैसे-जैसे बच्चों का रुझान दिखा उस आधार पर।

इन सभी कामों में मेरी भूमिका महत्त्वपूर्ण थी, क्योंकि मुझे भी बाल साहित्य में रुचि है। और मैं, बच्चों के साथ बाल साहित्य की दुनिया का आनन्द लेने के लिए उतनी ही आतुर थी, जितना कि वेदांत। यहाँ पर घर के बड़े-बुज़ुर्ग सदस्यों का भी कम योगदान नहीं है। पुरानी कहावत सच ही है, बच्चे बड़े करने में पूरे गाँव की भूमिका होती है। शायद इसीलिए स्कूल में, कक्षा में, और यहाँ तक कि समाज में भी पुस्तकालय हो, यह बात होती है।

आज के ज़माने में बच्चों के लिए सबसे बड़ा तोहफ़ा किताबें हैं। किस बच्चे को कौन-सी किताब पसन्द आएगी, इसका पता बच्चों के साथ समय बिताकर ही लगाया जा सकता है। इसके साथ ही लोककथाओं जैसी कुछ 'क्लासिक' किताबें हैं, जो अमूमन बच्चों को भाती हैं।

किताबों को अलग से नहीं, बल्कि बच्चों के बाक़ी सामान के साथ रहने दें। फिर किताबों के साथ की अन्त:क्रिया बोझिल नहीं लगेगी। इससे किताबें बच्चों के जीवन का सहज हिस्सा बनेंगी। अमूमन हम सुनते हैं कि बच्चों को पढ़ना आएगा, तब हम किताबें ख़रीदेंगे। पर सच यह है कि बच्चे पढ़ना ही तब सीखेंगे, जब उनके इर्द गिर्द किताबें होंगी, उन्हें कोई पढ़कर सुनाएगा, आदि।

बच्चों के साथ काम करने के लिए दो बातों की ज़रूरत होती है। एक है विश्वास, और दूसरा धैर्य। विश्वास यह कि सभी बच्चे सीख रहे हैं, और धैर्य यह कि हम समय देंगे, जल्दबाज़ी नहीं करेंगे।

सन्दर्भ

1. हाशमी, सफ़दर, 'किताबें', *दुनिया सबकी : सफ़दर हाशमी की कविताएँ* (https://kavishala.in/sootradhar/safdar-hashmi/kitabem-safadara-hasami)
2. देवी, महाश्वेता, (2003), *क्यूँ-क्यूँ लड़की,* तूलिका प्रकाशन।
3. उत्साही, राजेश, *भालू ने खेली फ़ुटबॉल।*
4. Carle, Eric. (2011). *The Very Busy Spider. World of Eric Carle.*

सभी चित्र : निशा बुटोलिया

निशा बुटोलिया, अज़ीम प्रेमजी विश्वविद्यालय, भोपाल में अध्यापन कार्य कर रही हैं। वे शिक्षा का समाज शास्त्र और भाषा शिक्षण से जुड़े विषय पढ़ाती हैं। उन्होंने अपने कार्य की शुरुआत बतौर प्राथमिक शिक्षक की और फिर विभिन्न शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रमों को विकसित करने में योगदान दिया है। उनकी विभिन्न राज्यों में ज़िला एवं राज्य स्तरीय अधिकारियों के पेशेवर विकास कार्यक्रमों में भागीदारी रही है। पाठ्यपुस्तकों एवं अन्य पठन-पाठन सामग्रियों के विकास में इनकी विशेष रुचि है।

सम्पर्क : nisha.butoliya@apu.edu.in